letter2:letter1.qxd 9/26/2010 8:42 PM Page 112

अपनी युवा-पीढ़ी को ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत होना होगा। मैं अपने गत 52 सालों के अनुभवों के आधार पर कह सकता हूँ कि ग्रामीण क्षेत्र के निवासी आज भी मानवीयता से जुड़े हुए हैं। वे दूसरों की पीड़ा से व्यथित होकर उनकी सहायता के लिए आगे आते हैं। अतः धनलोलुपता की वृति के स्थान पर देशभक्ति की भावना, ग्रामवासियों में प्रचलित करना अधिक सुगम है।

देश की समृद्धि का मूलभूत आधार ग्रामीण अंचल ही है। मानव जीवन की सभी आवश्यकताएं प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करती हैं। प्राकृतिक संसाधन केवल ग्रामीण अंचल में ही उपलब्ध होते हैं - शहरों में नहीं।

शहरी आबादी हो या ग्रामीण, सभी मानवों के लिए उदर-भरण की व्यवस्था अनिवार्य है। उदर-भरण के सभी पदार्थ कृषि उत्पादन से प्राप्त होते हैं और कृषि उत्पादन केवल ग्रामीण अंचल में ही संभव है।

मानव सृजनशील (क्रियेटिव) प्राणी है। वह अन्य प्राणियों के समान प्राकृतिक अवस्था में अपना जीवन नहीं बिताता। वह रहने के लिए सुविधाजनक आवास बना लेता है। जाड़े और गर्मी में अनुकूल वस्त्र धारण करता है। अनाज पकाकर खाता है। भोजन पकाने के लिए विविध उपकरणों का निर्माण करता है।

आवागमन के एक से एक बढ़िया साधन निर्माण करता है। इन सब वस्तुओं के निर्माण का आधार होता है - वनजन्य पदार्थ तथा भूगर्भजन्य पदार्थ। वे भी ग्रामीण अंचल से ही प्राप्त होते हैं।

मानव ने अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिए पशु-पालन को भी अपनाया है। पशु-पालन का कार्य विशाल पैमाने पर ग्रामीण अंचल में ही संभव है। पशु-खाद्य भी ग्रामीण अंचल से ही उपलब्ध होते हैं। इसका अर्थ है कि देश और समाज की समृद्धि का मूल स्रोत ग्रामीण अंचल ही है। अतः समाज के स्थाई अस्तित्व एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए ग्रामीण विकास को ही आधार बनाना अपरिहार्य है। दुर्भाग्य से, स्वतंत्र भारत में इस मूलभूत स्रोत की सर्वाधिक उपेक्षा की गई है।

जब हम गुलामी में जकड़े हुए थे, पश्चिमी देशों में आद्यौगिक औद्योगिक क्रांति हुई थी। फलस्वरूप, उन देशों में विशालकाय कारखाने अस्तित्व में आए थे। बहुत बड़े पैमाने पर उत्पादन होने लगा था। उसे बेचने के लिए उन्हें बड़े बाजारों की आवश्यकता थी। भारत जैसा विशाल देश भी उन्हीं के शासन के अधीन था। भारत में कृषि कार्य के साथ-साथ गांव-गांव में समान स्तर पर सब प्रकार के कुटीर उद्योगों का जाल फैला हुआ था। सभी लोगों की आवश्यकताएं स्थानीय आधार पर ही पूरी होती थीं।

साम्राज्यवादी अंग्रेजों ने अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए हमें गुमराह किया। उन्होंने चालाकी से प्रचारित किया कि भारत तो कृषि प्रधान देश है। उसे उसी में जुटा रहना चाहिए। भारत में फैले देशव्यापी कुटीर उद्योगों का उन्होंने सफाया कर डाला और अपने उत्पादन को बेचने के लिए भारत को विशाल मंडी के रूप में परिणत कर दिया। दुर्भाग्य से हमारा नेतृत्व अंग्रेजों के इस दुष्प्रचार का शिकार बना। अभी भी हम इसी भ्रम में हैं कि भारत केवल कृषिप्रधान देश है।

हमें समझना चाहिए कि वही देश सब दृष्टियों से स्वावलंबी अर्थात् स्वाधीन बन सकता है, जो कृषि एवं औद्योगिक विकास समान रूप से कर पाता है। अपने देश में सब प्रकार के प्राकृतिक संसाधन उपलब्ध हैं। फलस्वरुप, हमारा देश दोनों प्रकार का विकास समान स्तर पर पहले भी कर चुका था और अब भी कर सकता है। ऐसा सौभाग्य विश्व में कम ही देशों को प्राप्त है।

पश्चिमी देशों के विकास की दिशा मानवीयता रहित है। वह मानव जाति के सह-अस्तित्व के प्रतिकूल है। वे देश मानव मात्र के सुखमय जीवन का विचार ही नहीं करते। स्वयं का जीवन

अंग्रेजों ने चालाकी से प्रचारित किया कि भारत तो कृषिप्रधान देश है। भारत में फैले कुटीर उद्योगों का उन्होंने सफाया कर डाला और भारत को एक विशाल मंडी में परिणित कर दिया।

अधिकाधिक सुखमय बनाने के लिए अन्य देशों का शोषण करना उनका परंपरागत स्वभाव है।

अधिकाधिक समृद्धि के लिए वे संपूर्ण विश्व को अपने उत्पादन का बाजार बनाना चाहते हैं। वे एक से एक विध्वंसकारी हथियार बनाकर नवस्वतंत्र देशों को बेचकर धन कमा रहे हैं। इसका अर्थ क्या है? वे विश्व-शांति के उपासक नहीं हैं। ये विकसित कहे जाने वाले देश विश्वभर में अपने वर्चस्व का विस्तार करने में लगे हुए हैं।

वे समझ नहीं पा रहे हैं कि उनकी प्रगति की दिशा अंततोगत्वा उनके लिए भी आत्मघाती सिद्ध होगी। उनकी औद्योगिक प्रगति आज उनकी समृद्धि का आधार दिखाई देती हैं। वे उत्पादन के लिए एक से एक बढ़कर स्वचालित यंत्रों का आविश्कार कर रहे हैं। कम से कम हाथों द्वारा अधिक से अधिक उत्पादन करने की दिशा में वे बढ़ रहे हैं। मानव श्रम के स्थान पर उन्होंने यंत्र-मानवों का उपयोग करना श्रेयस्कर माना है। परिणामस्वरुप, इन विकसित कहे जाने वाले देशों में अब बेकारी की समस्या सिर उठा रही है। उनकी अपनी उत्पादन विधि, बेकारी की समस्या को बेकाबू बनाने वाली है। इस आशंका से वे अन्य ग्रहों पर आबादी बसाने की संभावनाएं खोज रहे हैं। पूंजीप्रधान प्रथा की समृद्धि की भूख इतनी अधिक होती है, जिसकी कोई सीमा नहीं होती। फलस्वरुप, वह सामाजिक जीवन के विनाश का कारण बनती है।

उपर्युक्त पूंजीपति प्रथा के विकल्प के रुप में 1917 में रुस में साम्यवादी क्रांति हुई थी। उस क्रांति ने श्रमिकों की तानाशाही प्रस्थापित करने का लक्ष्य बनाया था। कुछ सालों तक उसका विश्वभर में बोलबाला होता रहा। उसने वर्ग-संघर्ष के नाम पर मानव-मानव में शत्रुता को जन्म दिया। मानव जाति के सह-अस्तित्व के मूल सिद्धांत के प्रतिकूल कोई व्यवस्था अधिक समय तक टिक नहीं सकती, यह भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का अनुभवसिद्ध निष्कर्ष है। अतः इने-गिने सालों में ही यह साम्यवादी विकल्प बेकार सिद्ध हुआ है।

स्वतंत्र भारत में उपर्युक्त दोनों मानवीयता रहित व्यवस्थाओं को मिलाकर मिश्रित अर्थव्यवस्था का प्रयोग किया गया। उससे राहत मिलने वाली नहीं थी। अब उदारवादी अर्थव्यवस्था का आलाप छेड़ा गया है। वह समाज में विशमता की खाई और अधिक चौड़ी कर रहा है, जो सह-अस्तित्व के सिद्धांत के विपरीत है। अतः इसकी विफलता भी अटल है।

जो व्यवस्था समाज में सह-अस्तित्व के अनुकूल नहीं होगी, वह असंख्य समस्याओं की जननी बनेगी। जो देश आज आर्थिक समृद्धि के शिखर पर आरुढ़ दिखाई दे रहे हैं, वे इस तथ्य को नजरअंदाज कर रहे हैं।

सौभाग्य से, भारत के युवाओं को अपने देश के साथ-साथ अधिकसित एवं विकासमान देशों के लिये प्रगति का दोषमुक्त नमूना प्रस्तुत करने का सुअवसर उपलब्ध है। ग्रामीण अंचल किसी भी देश के समुचित उन्नति का मूलभूत स्रोत है। उसी को प्रगति की सुदृढ़ नींव मानकर स्वाभिमानपूर्ण व स्वावलंबी जीवन खड़ा किया जा सकता है। वर्तमान काल में उसका अनुकरणीय नमूना विश्व में कहीं भी उपलब्ध नहीं है, न उस ओर किसी का ध्यान ही है।

भारत का युवा-वर्ग इस अभाव को दूर कर केवल अपना ही जीवन सार्थक नहीं बनाएगा, अपितु मानव-मात्र के लिए प्रगति का आदर्श मार्ग प्रशस्त करेगा।

शुभाकांक्षी-

नानाजी देशमुख

(नाना देशमुख)

ग्रामीण अंचल किसी भी देश के समुचित उन्नति का मूलभूत स्रोत हैं। उसी को प्रगति की सुदृढ़ नींव मानकर स्वाभिमानपूर्ण व स्वावलंबी जीवन खड़ा किया जा सकता है।